International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 5.712 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 8, Issue 4, July 2021 |

सिद्ध सम्प्रदाय की पृष्ठभूमि व प्रादुर्भाव

DR. YASHWANT SHAURYA

ASSISTANT PROFESSOR, HEAD OF DEPT. OF HISTORY, MAULANA AZAD UNIVERSITY, BUJHAWAR, JODHPUR, RAJASTHAN, INDIA

सार

सिद्ध साहित्य ब्रजयानी सिद्धों के द्वारा रचा गया साहित्य है। इनका संबंध बौद्ध धर्म से है। ये भारत के पूर्वी भाग में सक्रिय थे। इनके ग्रंथों की संख्या 84 मानी जाती है सिद्ध साहित्य का प्रारंभ आठवीं सदी से लेकर तेरे सदी मन जाती है जिनमें सरहप्पा, शबरप्पा, लुइप्पा, डोम्भिप्पा, कुक्कुरिप्पा (कणहपा) आदि मुख्य हैं। इन्होंने अपभ्रंश मिश्रित पुरानी हिंदी तथा अपभ्रंश में रचनाएं की हैं। सरहप्पा प्रथम सिद्ध कवि थे। राहुल सांकृत्यायन ने इन्हें हिन्दी का प्रथम कवि माना है। साधना अवस्था से निकली सिद्धों की वाणी 'चरिया गीत / चर्यागीत' कहलाती है। बौद्ध धर्म की दो शाखाएंहीनयान,महायान सिद्ध साहित्य महायान शाखा से संबंधित साहित्य था सिद्ध साहित्य में जातिवाद और वाह्याचारों पर प्रहार किया गया है। इसमें देहवाद का महिमा मण्डन और सहज साधना पर बल दिया गया है। इसमें महासुखवाद द्वारा ईश्वरत्व की प्राप्ति पर बल दिया गया है। सिद्ध साहित्य के रचयिताओं में लुईपा सर्वश्रेष्ठ हैं। सिद्ध साहित्य के प्रमुख कवि सरहपा दोहा कोष 769 ई. शबरपा चदपिद 780 ई. कण्हपा 74 ग्रंथ 820 ई. डोम्मिप् डोम्बि, गीतिक, योगचर्चा, अक्षरादकोष कुक्कुरिपा 16 ग्रंथ 840 ई.

परिचय

सिद्धों का चरम उत्कर्ष काल आठवीं से दसवीं शताब्दियों के मध्य था। इनके प्रमुख केन्द्र श्रीपर्वत, अर्बुदपर्वत, तक्षशिला, नालन्दा, असम, और बिहार थे। सिद्धों को पालवंश का संरक्षण प्राप्त था। बाद में मुसलमान अक्रमाणकारियों से त्रस्त और दुखी होकर सिद्ध 'भोर' देश अथार्त नेपाल, भूटान, तिब्बत की ओर चले गए।

सिद्धों के विषय में सबसे पहली जानकारी ज्योतिरीश्वर ठाकुर की रचना 'वर्णरत्नाकर' से मिलती है। सिद्धों की रचनाओं की खोज पहले हरप्रसाद शास्त्री ने नेपाल से किया था। १९१७ ई० में इनकी वाणियों का संकलन 'बौद्ध गान और दोहा' के नाम से बांग्ला भाषा में किया गया। इसके बाद सिद्धों के विषय में विस्तृत और विवेचनात्मक जानकारी सबसे पहले राहुल सांकृत्यायन ने 'हिन्दी काव्यधारा' में दी जो १०४५ में प्रकाशित हुई थी। राहुल ने सिद्ध साहित्य का आरम्भ सरहपा से माना है और इनका (सरहपा का) समय ७६९ ई० के लगभग माना है। उन्होने सिद्धों की संख्या चौरासी माना है जिनमें ८० पुरुष और ४ स्त्रियाँ (कनखलापा, लक्ष्मीकरा, मणिभद्रा, मेखलापा) थीं। मत्स्येंद्रनाथ (मच्छंदरनाथ), जालान्धरनाथ, नागार्जुन, चर्पटनाथ और गोरखनाथ - वे सिद्ध कवि हैं जो नाथ साहित्य में भी आते हैं।

प्रसार क्षेत्र

सिद्ध सा हित्य बिहार से लेकर असम तक फैला था। राहुल संकृत्यायन ने 84 सिद्धों के नामों का उल्लेख किया है जिनमें सिद्ध 'सरहपा' से यह साहित्य आरम्भ होता है। बिहार के नालन्दा विद्यापीठ इनके मुख्य अड्डे माने जाते हैं। बख्तियार खिलजी ने आक्रमण कर इन्हें भारी नुकसान पहुचाया बाद में यह 'भोट' देश चले गए। इनकी रचनाओं का एक संग्रह महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने बांग्ला भाषा में 'बौद्धगान-ओ-दोहा' के नाम से निकाला।[1]

सिद्ध साहित्य की विशेषताएं -

- सिद्ध कवि व्यवहारिक पक्ष पर बल देते थे

- सिद्ध कवियों ने मंत्र जादू टोना चमत्कार शब्दों द्वारा तांत्रिक साधना पद्दी अपनाएं
- उन्होंने ब्राह्मण धर्म का विरोध किया
- सिद्ध कवि योग साधना पर विशेष बल देते थे
- सिद्ध कवि मोक्ष पाने की अपेक्षा सिद्धियों पर जोर देते थे
- सिद्ध कवियों ने जाति पांति एवं वर्ण भेद का उठकर मुकाबला किया
- सिद्धू ने रहस्यवादी प्रवृत्ति को अपनाकर संध्या भाषा के माध्यम से यह प्रवचन देते थे अपभ्रंश प्लस अर्धमगधी

- सिद्ध साहित्य की काव्य में कबीर सूरदास विद्यापति ने काव्य को प्रभावित किया
- बिहार पश्चिम बंगाल श्री पर्वत आदि प्रसिद्ध कवि छोटी जातियों एवं आरक्षित में से थे

वर्गीकरण

सिद्ध साहित्य को मुख्यतः निम्न तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है:-

- (१) नीति या आचार संबंधित साहित्य
- (२) उपदेश परक साहित्य
- (३) साधना सम्बन्धी या रहस्यवादी साहित्य[2]

भाषा-शैली

सिद्धों की भाषा में 'उलटबासी' शैली का पूर्व रुप देखने को मिलता है। इनकी भाषा को संध्या भाषा कहा गया है।

सिद्ध साहित्य की प्रमुख विशेषताएं

- इस साहित्य में तंत्र साधना पर अधिक बल दिया गया।
- साधना पद्धति में शिव-शक्ति के युगल रूप की उपासना की जाती है।
- इसमें जाति प्रथा एवं वर्णभेद व्यवस्था का विरोध किया गया।
- इस साहित्य में ब्राह्मण धर्म का खंडन किया गया है।
- सिद्धों में पंच मकार (मांस, मछली, मदिरा, मुद्रा, मैथुन) की दुष्प्रवृति देखने को मिलती है। हालांकि तंत्रशास्त्र में इसका अर्थ भिन्न बताया गया है।

प्रमुख सिद्ध कवि व उनकी रचनाएँ

- सरहपा (769 ई.) - दोहाकोष

- लुइपा (773 ई. लगभग) – लुइपादगीतिका[3]

- शबरपा (780 ई.) -- चर्यापद , महामुद्रावज्रगीति , वज्रयोगिनीसाधना
- कण्हपा (820 ई. लगभग) -- चर्याचर्यविनिश्चय, कण्हपादगीतिका
- डोंभिपा (840 ई. लगभग) -- डोंबिगीतिका, योगचर्या, अक्षरद्विकोपदेश
- भूसुकपा-- बोधिचर्यावतार
- आर्यदेवपा -- कावेरीगीतिका
- कंवणपा -- चर्यागीतिका
- कंबलपा -- असंबंध-सर्ग दृष्टि
- गुंडरीपा -- चर्यागीति
- जयनन्दीपा -- तर्क मुदँगर कारिका
- जालंधरपा -- वियुक्त मंजरी गीति, हुँकार चित्त , भावना क्रम
- दारिकपा -- महागुह्य तत्त्वोपदेश
- धामपा -- सुगत दृष्टिगीतिकाचर्या

सिद्ध साहित्य को आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने सांप्रदायिक शिक्षा मात्र कहा जिनका बाद में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने खण्डन किया। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सिद्ध साहित्य की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि, "जो जनता तात्कालिक नरेशों की स्वेच्छाचारिता, पराजय त्रस्त होकर निराशा के गर्त में गिरी हुई थी, उनके लिए इन सिद्धों की वाणी ने संजीवनी का कार्य किया।[4]

विचार-विमर्श

सिद्ध बौद्ध धर्म की वज्रयान शाखा से सम्बंधित हैं। सिद्धों ने बौद्ध-धर्म के वज्रयान तत्व का प्रचार करने के लिए जन भाषा में जो साहित्य लिखा वह हिन्दी के सिद्ध साहित्य के अन्तर्गत आता है। राहुल सांकृत्यायन ने चौरासी सिद्धों के नामो का उल्लेख किया है। सिद्ध साहित्य का आरम्भ सिद्ध सरहपा से होता है। सरहपा को प्रथम सिद्ध माना जाता है। इन सिद्धों में सरहपा, शबरपा, लुइपा, डोम्भिपा, कण्हपा तथा कुक्कुरिपा हिन्दी के प्रमुख सिद्ध कवि हैं।[1]

दर्शन

सिद्ध धार्मिक कर्मकाण्ड, बाह्याचार, तीर्थाटन आदि के विरोधी थे। इन्होंने अपनी रचनाओं में नैरात्म्य भावना, कायायोग, सहज, शून्य तथा समाधि की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं का वर्णन किया है। पहले सिद्ध सरहपा ने सहजयान का प्रवर्तन किया था। उन्होंने सहज जीवन और सहज साधना पर जोर दिया था।

साहित्य

सिद्ध दर्शन को सिद्ध साहित्य में अभिव्यक्ति मिली है। इसकी भाषा अपभ्रंश एवं पुरानी हिंदी है। अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए इन्होंने संधा भाषा का प्रयोग किया है। यह अंतस्साधनात्मक अनुभूतियों का संकेत करनेवाली प्रतीक-भाषा है। इसका तात्पर्य प्रतीकार्थ खुलने पर ही प्रकट होता है।

स्थान

सिद्धों का स्थान पूर्वी भारत माना जाता है। बिहार, बंगाल, ओड़िसा, असम आदि क्षेत्र सिद्ध साधकों के प्रभाव वाले माने जाते हैं। इनके गढ़ तत्कालीन शिक्षा के केंद्र के रूप में विख्यात नालंदा के आसपास के क्षेत्र में थे।

सिद्ध चिकित्सा भारत के तमिलनाडु की एक पारम्परिक चिकित्सा पद्धति है। भारत में इसके अतिरिक्त आयुर्वेद और यूनानी चिकित्सा पद्धतियाँ भी प्रचलित हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि उत्तर भारत में यह पद्धति ९ नाथों एवं ८४ सिद्धों द्वारा विकसित की गयी जबकि दक्षिण भारत में १८ सिद्धों (जिन्हें 'सिद्धर' कहते हैं) द्वारा विकसित की गयी। इन सिद्धों को यह ज्ञान शिव और पार्वती से प्राप्त हुआ। यह चिकित्सा पद्धति भारत की ही नहीं, विश्व की सर्वाधिक प्राचीन चिकित्सा-पद्धति मानी जा सकती है।[5]

सिद्ध काफी हद तक आयुर्वेद के समान है। इस पद्धति में रसायन का आयुर्विज्ञान तथा आल्केमी (रसायन विश्व) के सहायक विज्ञान के रूप में काफी विकास हुआ है। इसे औषध-निर्माण तथा मूल धातुओं के सोने में अंतरण में सहायक पाया गया। इसमें पौधों और खनिजों की काफी अधिक जानकारी थी और वे विज्ञान की लगभग सभी शाखाओं की जानकारी रखते थे।

सिद्ध प्रणाली के सिद्धांत और शिक्षा मौलिक और व्यावहारिक दोनों हैं। यह आयुर्वेद के समान ही है इसकी विशेषता आंतरिक रसायन है। इस प्रणाली के अनुसार मानव शरीर ब्रह्माण्ड की प्रतिकृति है (यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे) और इसी प्रकार से भोजन और औषधि भी, चाहे उनका उद्भव कहीं से भी हुआ हो। यह प्रणाली जीवन में उद्धार की परिकल्पना से जुड़ी हुई है। इस प्रणाली के प्रवर्तकों का मानना है कि औषधि और मनन-चिंतन के द्वारा इस अवस्था को प्राप्त करना संभव है।

सिद्ध प्रणाली आकस्मिक मामलों को छोड़ कर सभी प्रकार के रोगों का इलाज करने में सक्षम है। सामान्य तौर पर यह प्रणाली त्वचा संबंधी सभी समस्याओं का उपचार करने में सक्षम हैं; विशेष कर सोरियासिस, यौन संचारित संक्रमण, मूत्र के रास्ते में संक्रमण, यकृत की बीमारी और गैस्ट्रो आंत के रास्ते के रोग, सामान्य डेबिलिटी, पोस्टपार्टम एनेमिया, डायरिया और गठिया (आथ्रॉइटिस) और एलर्जी विकार के अतिरिक्त सामान्य बुखार आदि।

निदान

निदान के लिये आठ चीजों का परीक्षण किया जाता है-

1. ना (जिह्वा)
2. वर्णम् (रंग)
3. कुरल् (ध्वनि)
4. कण् (आंखें)
5. तॊडल् (स्पर्श)
6. मलम् (मल)
7. नीर (मूत्र)
8. नाडि (नाड़ी)

परिणाम

सिद्ध , जिसे सिद्ध (हिंदी : सिद्ध) भी कहा जाता है, एक जाति और एक निर्गुण संप्रदाय से जुड़े लोग हैं जिनकी उत्पत्ति गुरु जसनाथजी के रहस्योद्घाटन के आधार पर राजपूताना के बीकानेर राज्य में 15 वीं शताब्दी में हुई थी । [1] सिद्ध शब्द का अर्थ है जिसने स्वयं को सिद्ध किया हो। राजस्थान में जोगी और नाथ के साथ सिद्ध लोग ओबीसी जातियों की राज्य सूची में शामिल हैं। [2] हालाँकि वे राजस्थान के लिए ओबीसी की केंद्रीय सूची में शामिल नहीं हैं। [3]

इतिहास

सिद्ध संप्रदाय के संस्थापक गुरु जसनाथजी (1484-1506), हमीरजी ज्याणी और उनकी पत्नी रूपांदे के पालक पुत्र थे, जो बीकानेर से 25 मील उत्तर-पूर्व में स्थित कतरियासर गांव के निवासी थे। [4] सिद्धों की वंशावली उनके शिष्यों से मिलती है जो मुख्यतः जाट थे। जसनाथजी ने तपस्या की और अपने स्वयं के धार्मिक संप्रदाय की स्थापना की। उन्हें जाटों से शिष्य मिले जो सिद्ध (दिव्य कृपा प्राप्त करने वाले) के अनुयायी होने के कारण सिद्ध कहलाये। समय के साथ वे एक बंद अंतर्विवाही समुदाय बन गए।

संस्कृति और धार्मिक अवलोकन

एक सिद्ध व्यक्ति की पहचान उसकी विशिष्ट केसरिया रंग की पगड़ी से की जा सकती है। सिद्ध पूर्णतः शाकाहारी हैं। इनमें शराब पीना वर्जित है। सिद्धों को कई गोत्रों में विभाजित किया गया है । कुछ सामान्य गोत्र कूकना, गोदारा, जानी, मंदा, जाखड़, सारन, माहिया, भादु, सौ, कलवानिया, बलिहारा, सिहाग, मान आदि हैं। गोत्र सख्ती से बहिर्विवाही हैं और सामाजिक स्थिति में सभी समान हैं। किसी महिला के पुनर्विवाह की अनुमति है चाहे वह परित्यक्ता हो या विधवा। विस्तृत रीति-रिवाजों के साथ विवाह केवल लड़की की पहली शादी की स्थिति में ही होता है।[6]

36 नियम

सिद्धों के लिए 36 सिद्धांत बताए गए हैं। इन्हें इस प्रकार सूचीबद्ध किया गया है। [5]

1. कल्याणकारी कार्यों में भाग लें.
2. अपने-अपने धर्म का पालन करना।
3. हिंसा न करें.
4. लंबे बाल रखें.
5. स्नान के बाद ही भोजन करें।
6. सुबह-शाम भगवान से प्रार्थना करें।
7. संतुष्ट रहें.
8. एक ईश्वर पर विश्वास रखें.
9. अहोम (शुद्धि का अनुष्ठान) करें।
10. अशुद्ध मुँह से आग पर न फूंकें।
11. पानी और दूध को कपड़े से छानकर पियें।
12. मृतकों को दफ़नाना चाहिए।
13. मोक्ष का मार्ग खोजें.

14. अपनी बेटियों को मत बेचो.

15. ब्याज और चक्रवृद्धि ब्याज लेना छोड़ दें.

16. अपनी आय का 1/20 भाग धार्मिक कार्यों पर खर्च करें।

17. चुगली न करें.

18. धूम्रपान और लहसुन का त्याग करें।

19. अनैतिक व्यापार न करें।

20. बैलों को बधिया न करना, और पशुओं को कसाइयों के हाथ न बेचना।

21. जानवरों के प्रति दया रखें.

22. गौशालाओं का निर्माण करें और मवेशियों को कसाईयों से बचाएं।

23. धर्म में आस्था रखें और दयालु बनें.

24. वाद-विवाद में न पड़ें.

25. घर आए मेहमानों का ख्याल रखें.

26. चोरी जैसी बुराइयों का त्याग करें.

27. मासिक धर्म वाली महिलाओं को अलग रखा जाना चाहिए।

28. शराब पीना छोड़ दो.

29. मृत्यु और जन्म के बाद सूतक का पालन करें। (इस मान्यता के अनुसार, बच्चे के जन्म या गर्भपात के समय घर को अशुद्ध माना जाता है।)

30. परिवार के सदस्यों को परेशान न करें.

31. भगवान शिव का स्मरण करें.

32. मांस न खायें।

33. बुरे लोगों की संगति छोड़ दें.

34. सहनशील बनें और दूसरों को क्षमा करें.

35. अफ़ीम, गांजा आदि नशीले पदार्थों का त्याग करें।

36. पक्षियों को पानी दें और दाना डालें।

इन सिद्धांतों पर एक त्वरित नज़र डालने से पता चलता है कि उनमें से कई दोहराए गए हैं। मादक द्रव्यों के सेवन के संबंध में निषेधाज्ञा तीन बार (संख्या 18, 28, 35) आती है। इसी प्रकार पशुओं की सुरक्षा की बात तीन बार (संख्या 20, 21, 22) दोहराई गई है। लैंगिक संबंधों को लेकर चिंता स्पष्ट हो गई है, क्योंकि बेटियों को बेचने की सामाजिक बुराई पर रोक लगा दी गई है।

निष्कर्ष

राष्ट्रीय सिद्ध संस्थान (National Institute of Siddha), चेन्नई में तम्बरम में स्थित सिद्ध चिकित्सा का प्रमुख संस्थान है। इस संस्थान का मुख्य उद्देश्य सिद्ध चिकित्सा प्रणाली के लिए अनुसंधान और उच्च अध्ययन की सुविधा उपलब्ध कराना तथा इस प्रणाली के लिए वैश्विक मान्यता प्राप्त करने में सहायता करना है। यह संस्थान उन सात शीर्ष राष्ट्र स्तरीय शिक्षा संस्थाओं में से एक है, जो भारतीय चिकित्सा पद्धतियों में उत्कृष्टता

को बढ़ावा देती हैं। सिद्ध चिकित्सा में अनुसंधान की एकमात्र संस्था - केन्द्रीय सिद्ध अनुसंधान परिषद (सीसीआरएस) का राष्ट्रीय मुख्यालय भी यहां पर स्थित है।

2010 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण ने इस संस्थान को संरक्षित स्मारक घोषित कर दिया, जिसके परिणाम स्वरूप वहां स्थित मौजूदा भवनों की मरम्मत या नवीकरण पर राष्ट्रीय स्मारक प्राधिकरण ने प्रतिबंध लगा दिया।[6]

केन्द्रीय आयुर्वेद और सिद्ध अनुसंधान परिषद (सीसीआरएएस), नई दिल्ली के अंतर्गत 1978 में स्थापित सिद्धावास अनुसंधान परिषद, 2010 तक रही। मार्च, 2010 में केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय के आयुष विभाग ने सिद्ध चिकित्सा में अनुसंधान के लिए केन्द्रीय सिद्ध अनुसंधान परिषद (सीसीआरएस) की स्थापना की, जिसके लिए तमिलनाडु और अन्य स्थानों के सिद्ध समुदाय ने काफी समय से दबाव डाल रहे थे। नई परिषद का मुख्यालय चेन्नई में बना और परिषद का अधिकृत रूप से गठन सितंबर, 2010 में हुआ।[6]

संदर्भ

1. केएस सिंह (1998)। भारत के लोग: राजस्थान । लोकप्रिय प्रकाशन. आईएसबीएन 9788171547692.
2. ^ "राज्य ओबीसी जातियों की सूची" ।
3. ^ "राजस्थान की सिद्ध जाति को अन्य पिछड़ी सूची में शामिल करने की आवश्यकता... 29 नवंबर, 2011 को" । Indiankanoon.org । 4 नवंबर 2020 को लिया गया ।
4. ^ अमरेश दत्ता (1988)। भारतीय साहित्य का विश्वकोश: देवराज से ज्योति, खंड 2 । साहित्य अकादमी. आईएसबीएन 9788126011940.
5. ^ सुरिंदर सिंह, आईडी गौड़ (2008)। दक्षिण एशिया में लोकप्रिय साहित्य और पूर्व-आधुनिक समाज । पियर्सन एजुकेशन इंडिया। आईएसबीएन 9788131713587.
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास, सम्पादक-डा॰ नगेन्द्र, संस्करण १९८५, प्रकाशक- नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ दरियागंज, नयी दिल्ली-११००२, पृष्ठ- ७९